बुद्धि-बहुलता का सिद्धांत समावेशी शिक्षा का दर्शन

मंजीत सेन गुप्त*

आज के लोकतांत्रिक और समावेशी शिक्षा की ओर अग्रसर शिक्षा व्यवस्था में यह मान लेना कि बुद्धि एक एकल क्षमता है तथा यह अनुवांशिकी द्वारा बच्चे को प्राप्त होती है, कदापि स्वीकार्य नहीं हो सकता। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में गार्डनर द्वारा प्रस्तावित बुद्धि-बहुलता का सिद्धांत जिसमें संज्ञानात्मक योग्यताओं को क्षमताओं या बुद्धियों की एक समष्टि के रूप में परिकल्पित किया गया है; अधिक समीचीन प्रतीत होता है। आज विश्व की लगभग सभी संस्कृतियों ने बुद्धि-बहुलता के इस सिद्धांत को न केवल मान्यता दी है, अपितु इस दिशा में अनेक शोध कार्यों व क्रियात्मक परिकल्पनाओं का सूत्रपात भी किया है। यह सार्वभौमिक शिक्षा की एक सकारात्मक सोच लिए समावेशी दर्शन है। यह हर बच्चे के सबल पक्ष को देखता है और इस मान्यता के साथ कि सभी बच्चे अपने-अपने अधिकार क्षेत्र में सीखने में सक्षम हैं; विद्यालय व अध्यापकों को चुनौती देता है कि शिक्षा व्यवस्था में उचित परिमार्जन कर देश की प्रगति में प्रत्येक नागरिक का योगदान सुनिश्चित करे।

प्रस्तावना

सन् 1983 में अमरीकी शिक्षाविद् हावर्ड गार्डनर ने अपनी बहुचर्चित पुस्तक *फ्रेम्स ऑफ़ माइंड—दि थ्योरी ऑफ़ मल्टीपुल इंटेलिजेन्सेज़* में बुद्धि-बहुलता के सिद्धांत को प्रस्तावित किया। वास्तव में, इस सिद्धांत के माध्यम से गार्डनर ने शिक्षा जगत में एक ऐसी क्रांति का सूत्रपात किया, जिसका मूल प्रजातांत्रिक धरातल पर स्थित था तथा जो समावेशी दर्शन से अपना पोषण प्राप्त करता था। जीन पियाने, लेव वाईगोट्स्की तथा जेरोम ब्रूनर की परंपरा में एक विकासात्मक मनोवैज्ञानिक के रूप में प्रशिक्षित गार्डनर ने प्रचलित बुद्धिलब्धि (IQ) मापन के सिद्धांत को मानने से इनकार कर दिया।

* *पूर्व आचार्य* एवं *विभागाध्यक्ष* रा.शै.अ. प्र. प., नयी दिल्ली (वर्तमान में – *निदेशक,* के.आई.आई.टी. शिक्षा महाविद्यालय, के.आई.आई.टी. कैम्पस, सोहना रोड, भौण्डसी, गुड़गाँव 122102)

उनके अनुसार, ''यह मान लेना कि बुद्धि एक एकल क्षमता है जो मुख्य रूप से आनुवंशिकी द्वारा प्रत्येक बच्चे को प्राप्त होता है और जिसे एक विशेष परीक्षण द्वारा मापा जा सकता है, स्वीकार्य नहीं है।''

उनकी इस चिंतनधारा के सूत्र को उन अनुसंधानों में पाया जा सकता है, जो गार्डनर ने मानसिक रूप से क्षतिग्रस्त बच्चों के साथ कार्य करते हुए पाया। उन्होंने शोध के दौरान ऐसे बच्चों को देखा, जो हालाँकि भाषा कौशलों में बहुत कमज़ोर थे, परंतु वे भी अपरिचित परिवेश में अपना रास्ता ढूंढ़ने में सक्षम थे। उन्होंने क्षतिग्रस्त मस्तिष्क वाले ऐसे मरीज़ भी पाए, जो आकाशीय या त्रिविमीय (Spatial) क्षमता में बहुत ही कमज़ोर थे, परंतु वे भाषायी क्रियाओं के संपादन में सक्षम थे। कुछ इसी प्रकार के तथ्य उन्हें सामान्य बच्चों पर किए गए अध्ययनों के फलस्वरूप भी मिले। इन अध्ययनों में भी उन्होंने पाया कि कोई बच्चा कविता, कल्पनाशक्ति या मौखिक संप्रेषण में अति उत्तम होते हुए भी चित्रांकन या रेखा-चित्रण में बुरी तरह असफ़ल रहता है। यह भी देखा गया कि कोई छात्र नक्शे आदि बनाने में अत्यंत निपुण होते हुए भी बोलने, लिखने या पढ़ने में कठिनाई का अनुभव करता है।

अपने अनुसंधानों से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर गार्डनर ने यह विश्वास व्यक्त किया कि संज्ञानात्मक योग्यताओं को तत्संबंधी क्षमताओं या प्रतिभाओं की एक समष्टि के रूप में परिकल्पित किया जा सकता है। भिन्न-भिन्न व्यक्तियों में ये बौद्धिक क्षमताएँ अलग-अलग अनुपात में मौजूद होती हैं। तथापि, प्रत्येक व्यक्ति में प्रतिभाओं के संयोजन की प्रकृति तथा प्रवीणता की अधिकृत मात्रा भिन्न-भिन्न हो सकती है। इन्हीं को इस सिद्धांत में बुद्धियों की संज्ञा दी गई है।

बुद्धि-बहुलता का सिद्धांत

आज बुद्धि-बहुलता के सिद्धांत को संसार की लगभग सभी संस्कृतियों ने मान्यता दी है। अनेकवाद को महत्व देकर इस सिद्धांत ने शिक्षा जगत में समावेशी विचारधारा और समतावादी मूल्यों को बल प्रदान किया है। प्रयोजनवाद से प्रेरित होने के कारण प्रस्तुत सिद्धांत की मान्यता है कि सत्य अनेक हैं, उनको जानने और सोचने के तरीके भी भिन्न-भिन्न हैं। इसके अंतर्गत शामिल आठ बुद्धियाँ अपने आप में समान महत्व की मानी गई हैं। अत: यह कहना अनुचित न होगा कि यह सिद्धांत वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त भाषायी तथा तार्किक—गणितीय बुद्धियों के वर्चस्व को खुली चुनौती देता है। टीलि (1996) स्पष्ट शब्दों में घोषणा करते हैं कि, ''सभी बच्चे सीखने में सक्षम हैं तथा वे सीखेंगे भी, यह विद्यालय का दायित्व है कि वह इसे सुनिश्चित करे।'' अत: आवश्यकता है कि सभी को अपने ढंग से तथा अपनी गति से सीखने के अवसर प्रदान करने की।

बुद्धि-बहुलता का सिद्धांत प्रत्येक बच्चे की विशिष्ट प्रतिभाओं को मूल्यवान मानता है। यह शिक्षा की एक सकारात्मक सोच लिए समावेशी दर्शन है, क्योंकि यह हर बच्चे के सबल पक्ष को देखता है और उसे उचित मान्यता देता है। इसके अंतर्गत व्यक्तित्व के सबल पक्ष को शिक्षा का माध्यम बनाया जाता है। पठन-पाठन की गत्यात्मक प्रक्रिया में कहानी,

कविता, चित्रांकन, प्रश्नोत्तरी, नृत्य, गीत, नाटक, आदि किसी का भी सहारा लिया जा सकता है जो छात्र द्वारा किसी अवधारणा को भली प्रकार समझने में सहायक सिद्ध हो।

बुद्धि-बहुलता के सिद्धांत में गार्डनर ने आठ बुद्धियों को सम्मिलित किया है। ये निम्नानुसार हैं—

1. भाषा-विषयक बुद्धि—भाषा के प्रभावी परिचालन की योग्यता;
2. तार्किक-गणितीय बुद्धि—पैटर्न, खोज निकालने तथा निगमनात्मक युक्तियों को तर्कसंगत रूप से सोचने की क्षमता;
3. त्रिविमीय या आकाशीय बुद्धि—मस्तिष्क में उपजी आकृतियों या चित्रों को क्रियात्मक रूप देने या उनका सृजन करने की क्षमता;
4. शारीरिक गत्यात्मक बुद्धि—मानसिक कौशलों का प्रयोग करते हुए शारीरिक गतियों पर नियंत्रण कर सकने की क्षमता;
5. संगीतिक बुद्धि—संगीत के सुर, लय, ताल की पहचान की क्षमता;
6. पारस्परिक बुद्धि— मिल-जुलकर कार्य करने की क्षमता;
7. अंतर-वैयक्तिक/बुद्धि—अपनी आंतरिक भावनाओं व प्रेरणाओं को समझने की क्षमता; और
8. प्रकृतिवाद बुद्धि—विवेक का उपयोग, गुण ग्रहण तथा प्राकृतिक विश्व को समझने की क्षमता।

ये बुद्धियाँ यद्यपि पृथक-पृथक दर्शाई गई हैं, परंतु वास्तव में ये सम्मिलित रूप से क्रियाशील होती हैं तथा इस प्रक्रिया में एक-दूसरे को पुनर्बलित करती हैं। गार्डनर कहते हैं कि सामान्यत: हमारी वर्तमान शिक्षा व्यवस्था तार्किक और आलोचनात्मक व्यक्तियों को ही बुद्धिमान की श्रेणी में रखती है, जबकि ऐसे अन्य अनेकों की अवहेलना की जाती है जो दूसरे प्रकार की बुद्धि के धनी होते हैं। इस श्रेणी में ऐसे लोग सम्मिलित हैं जो सफ़ल नर्तक, प्रतिष्ठित वास्तुकार, अभिकल्पक, दुभाषिया, उद्यमी, संगीतज्ञ या अन्य अनेक विशिष्ट योग्यता वाले क्षेत्रों में कार्यरत हैं तथा वे अपनी विशिष्ट प्रतिभा से संस्कृति को समृद्ध कर जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाने में संलग्न हैं।

इस संदर्भ में एक प्रश्न जो बहुत महत्वपूर्ण होकर उभरता है, वह है कि यदि कोई अध्यापक भाषायी या तार्किक बुद्धि द्वारा बच्चे के चित्त तक पहुँचने में असमर्थ रहता है तो निराश होकर बच्चे को असफ़ल घोषित कर देना उचित नहीं है, अपितु उसे विषय-वस्तु को प्रस्तुत करने के अन्य तरीके अपनाने की ज़रूरत है जो बच्चे की विशिष्ट प्रतिभा के अनुकूल हों। बच्चे की प्रकृतिनुसार अध्यापक विषय-वस्तु को शब्दों के माध्यम से, गीतों या कविताओं द्वारा, स्व-चिंतन का सहारा लेकर, शारीरिक या हस्तप्रचलित क्रियाओं के माध्यम से, सामाजिक अनुभवों का उपयोग कर या फिर प्राणी और वनस्पति जगत के माध्यम से प्रस्तुत कर छात्र के चित्त तक पहुँचने में समर्थ हो सकता है।

प्रत्येक बच्चा — श्रेष्ठ बच्चा

शिक्षण प्रक्रिया में किसी बच्चे को केवल इसलिए हतोत्साहित नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि वह किसी एक प्रकार की बुद्धि में कमज़ोर है। वास्तव में, उसकी प्रकृति प्रदत्त अन्य प्रमुख बुद्धि इस कमी को

पूरा कर उसे सफ़लता के शिखर तक ले जा सकती है। यही नहीं व्यक्ति की विभिन्न बुद्धियाँ एक-दूसरे से अंत:क्रिया कर अनेक प्रभावों को जन्म दे सकती हैं। उदाहरणार्थ, एक श्रेष्ठ वक्ता तथा एक उच्च कोटि के लेखक, दोनों में भाषायी बुद्धि की प्रबलता होती है, परंतु श्रेष्ठ वक्ता की यही भाषायी बुद्धि यदि उसकी संगीतीय बुद्धि, शारीरिक गत्यात्मक बुद्धि या पारस्परिक बुद्धि से पुनर्बलित हो जाए तो वह मंच पर अभूतपूर्व सफ़लता अर्जित करने में सक्षम हो सकता है। इसी प्रकार, ये बुद्धियाँ अंत:क्रिया के माध्यम से एक-दूसरे की पूरक भी बन जाती हैं। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति भाषायी बुद्धि से कमज़ोर होते हुए भी अपनी पारस्परिक बुद्धि के बल पर समाज में अपने लिए उत्तम स्थान बना लेता है। हमारा लक्ष्य होना चाहिए ''प्रत्येक बच्चा, श्रेष्ठ बच्चा'' क्योंकि हर बच्चा किसी-न-किसी बुद्धि में श्रेष्ठता रखता है। अत: हमारी शिक्षा पद्धति ऐसी होनी चाहिए, जो बुद्धि-बहुलता को स्वीकार कर उसका उचित प्रयोग करे ताकि प्रगति के पथ पर प्रत्येक नागरिक का योगदान सुनिश्चित किया जा सके।

आज जबकि प्रत्येक बच्चे को शिक्षा का अधिकार प्राप्त है, समाज प्रत्येक बच्चे को उसकी सामाजिक स्थिति, व्यक्तिगत गुणों, क्षमताओं, प्रतिभाओं अथवा लिंगभेद को ध्यान में न लाते हुए उसे येन-केन-प्रकारेण शिक्षित करने के लिए प्रतिबद्ध है। अत: विद्यालय को भी मानव संसाधन विकास की प्रक्रिया में इन विषमताओं को अवसर के रूप में देखा जाना चाहिए। विकासशील अर्थव्यवस्था में केवल इंजीनियर, डॉक्टर या मैनेजर ही नहीं, अपितु भवन, सड़क, पुल, यातायात के साधनों तथा अन्य प्रकार के निर्माण कार्यों, परिधान, चर्म या पुष्प उद्योग, मनोरंजन तथा संगीत उद्योग, खेलकूद, फ़ाइबर ऑप्टिक्स, साइबर सिक्योरिटी, फ़ॉरेंसिक साइंस, नैनो टेक्नोलॉजी तथा अन्य अनेक सेवागत उद्योगों में, सभी प्रकार के लोगों के लिए अपार संभावनाएँ हैं। उदाहरण के लिए, संप्रेषण कला में सर्वोत्तम होने पर व्यक्ति सफ़ल अनुवादक, अच्छा दुभाषिया, उपन्यासकार, कवि, नाटककार, विक्रेता या पर्यटक गाइड बन सकता है। इसी प्रकार, संगीत या लयात्मक क्षमता में पारंगत विद्यार्थी टी.वी. या चलचित्र जगत में सफ़लता अर्जित कर सकते हैं। अपनी इस प्रतिभा को परिमार्जित कर अच्छे गीतकार, स्वरकार, संगीतज्ञ, संगीत के वाद्य यंत्रों तथा संगीत उद्योग से संबंधित आधुनिक उद्यमों का या तो स्वयं संचालन कर सकते हैं या फिर उनका सृजन कर सकते हैं।

इसी प्रकार, वे छात्र-छात्राएँ जो वास्तुकार, चित्रकार, मूर्तिकार, कलाकार, अभिकल्पक या आंतरिक साज-सज्जा के क्षेत्र में जाना चाहते हैं, उन्हें त्रिविमीय तथा दृश्यात्मक क्षमताओं में बेहतर बनाना होगा। अन्य ऐसे विद्यार्थी भी होंगे, जो खेलकूद में, मनोरंजन उद्योग में, सफ़ल व्यायामी, अच्छे खिलाड़ी, कुशल जिमनास्ट, नर्तक या अभिनेता बनना चाहेंगे, उन्हें अपने शारीरिक अंगों पर नियंत्रण करना सीखना होगा तथा विभिन्न प्रकार की वस्तुओं को कुशलतापूर्वक प्रयोग करने पर ध्यान देना होगा। इसी क्रम में यह भी स्मरण योग्य है कि कुछ मूलभूत कौशलों, जैसे—आत्मसंयम, व्यवहार कुशलता, नेतृत्व के गुण, उद्यमिता के गुण, समझौता वार्ता में

कुशलता तथा प्रबंधन कौशलों में पारंगत होकर ही छात्र-छात्राएँ उच्च दर्जे के परामर्शदाता, अध्यापक, राजनीतिज्ञ, मनोवैज्ञानिक अथवा धार्मिक नेता बनने में सफ़लता अर्जित कर सकते हैं।

उपसंहार

मानव को जो बुद्धि की संपदा प्राप्त है, उसका उचित उपयोग कर वह स्वयं को असंख्य रूपों में अभिव्यक्त कर सकता है। बुद्धि-बहुलता का सिद्धांत मानव के बुद्धि सामर्थ्य को एक विशाल वर्णक्रम में देखने के लिए प्रोत्साहित करता है। वास्तविक जीवन में चित्रांकन, गीत-लेखन, रंगमंचन या कंप्यूटर के माध्यम से अभूतपूर्व प्रस्तुतीकरण को गणित या लेखन से कम नहीं आँका जाना चाहिए। अकसर देखा गया है कि ऐसे बच्चे जो पारंपरिक परीक्षणों में अच्छे अंक नहीं ला पाते, वे कला, क्रीड़ा, संगीत, रंगमंच, व्यवसाय आदि में अपनी श्रेष्ठता सिद्ध कर देते हैं। पुस्तक का लेखक और उसके लिए चित्रांकन करने वाला, दोनों ही सृजनात्मकता की कसौटी पर मूल्यवान हैं। दुर्भाग्यवश आज न तो अध्यापक और न ही छात्र समाज कार्य जगत में उपलब्ध अपार संभावनाओं से भली-भाँति परिचित है। परिणामत: वे इन नए-नए अवसरों का भरपूर लाभ नहीं उठा पाते और अज्ञानवश पहले से चली आ रही घिसी-पिटी लीक पर चलते हुए अपनी रुचि, अपना धन और अपना भविष्य दांव पर लगा देते हैं। गलत चयन के कारण न तो कार्यजनित संतोष ही उन्हें मिल पाता है और न ही आत्मसंतुष्टि या आत्मगौरव। अत: यह आवश्यक है कि हमारी शिक्षा पद्धति समय रहते प्रत्येक युवक की विशिष्ट प्रतिभा को पहचान कर उसे तत्संबंधी मार्गदर्शन दे ताकि सर्वसाधारण की बुद्धि समष्टि द्वारा समाज व आर्थिक जगत लाभान्वित हो सके। स्पष्टत: यह तभी संभव है जब हम बुद्धि लब्धि की पारंपरिक विचारधारा को त्याग कर बुद्धि-बहुलता के समावेशी सिद्धांत को अपनाएँ।

संदर्भ

टीलि. स्यू. 1996. रीडिज़ायनिंग द एजुकेशनल सिस्टम टु इनेबल ऑल स्टूडेंट्स टु सक्सीड. *बुलेटिन*. नवंबर 1.